

॥ श्रीमत्कुञ्जविहारिणे नमः ॥

रसिक अनन्य नृपति श्री स्वामी हरिदास जी महाराज कृत

अष्टादश-सिद्धांत के पद

श्री केलिमाल जी

॥ श्रीमत्कुञ्जविहारिणे नमः ॥



“आचारज ललिता सखी, रसिक हमारी छाप। नित्य किशोर उपासना, जुगल मंत्र को जाप॥
नाहीं द्वैताद्वैत हरि, नहीं विशिष्ट द्वैत। बंधे नहीं मतवाद में, ईश्वर इच्छा द्वैत॥”

ज्योंही-ज्योंही तुम राखत हो,
त्यांही-त्योही रहियतु है हो हरि।
और तो अचरचे पांय धरें,
सु तौ कहौ कौन के पैड भरि॥
जहूपि कियो चाहों अपनो मन भायौ,
सो तो क्यों करि सकों जो तुम - राखौ पकरि ।
कहें श्रीहरिदास पिजरा के जनावर लों
तरफराइ रह्यो उड़िबे कों कितोक करि ॥१॥

काहू को बस नाहि तुम्हारी कृपा तें
सब होइ बिहारी बिहारिनि।
ओर मिथ्या प्रपंच, काहे कों ' भाषिये
सु तो है हारिनि ॥
जाहि तुमसों हित, तासों तुम हित करो सब
सुख कारनि।
श्रीहरिदास के स्वामी स्यामा कुंजबिहारी
प्राननिके आधारनि ॥ २॥

कबहुँ-कबहुँ मन इत-उत जात
यातेब कान अधिक सुख ।
बहुत भांतिन घत आनि राख्यो
नाहि तौ पावतो दुख ॥
कोटि काम लावन्य बिहारी
ताके मुहाँचुही सब सुख लियै रहत रुख ।
स्वामी स्यामा कुंजबिहारी कौ
दिन देखत रहो बिचित्र मुख ॥३॥

हरि भजि हरि भजि,
छाडि न मान नर-तन कों।
मत बंछे मत बंछे रे,
तिलु-तिलु धन कों॥
अनमाँग्यो आगे आवेगो
ज्यों पलु लागत पलु कों।
कहें श्रीहरिदास मीचु ज्यों आवे
त्यों धन है आपुन कों ॥४॥

ए हरि मोसौ न बिगारन कौ
तोसो न सवारन कौ
मोहि तोहि परी होड़ ।

कौन धों जीते, कोन धों हारे, पर बदी न छोड़ ॥

तुम्हारी माया बाजी बिचित्र पसारी,
मोहे सुर मुनि काके भूले कोड़ ।

कहैं श्रीहरिदास हम जीते
हारे तुम, तऊ न तोड़ ॥५॥

बंदे अखतियार भला।
चित न डुलाउ,
आव समाधि भीतर
न होहु अगला ॥
न फिर दर-दर पैदर-दर,
न होहु अँधला ॥
कहें श्रीहरिदास करता किया,
सो हुवा सुमेर अचल चला ॥६॥

॥ राग विलावल ॥

हित तौ कीजे कमल नैन सौं
जा हित के आगे, और हित लागे सब फीको।
के हित कीजे साधु संगति सों
ज्यों कल्मष जाइ सब जीको ॥
हरि को हित ऐसो, जंसौ रंग मजीठ,
संसार हित रंग कसूभ दिन दुती कौ ।
कहें श्रीहरिदास हित कीजे श्रीबिहारीजु सों
ओर निबाहू जानि जीकौ ॥७॥

॥ राग विलावल ॥

तिनका ज्यों बयारि के बस ।

ज्यों चाहे त्यों उड़ाय

ले डारे अपने रस ॥

ब्रह्मलोक सिवलोक और लोक अस ।

कहें श्रीहरिदास बिचार देखो बिना

बिहारी नाहि जस ॥८॥

॥ राग विलावल ॥

संसार समुद्र मनुष्य मीन
नक्र मगर और जीव बहु बंदसि ।
मन बयारि प्रेरे स्नेह फंद फंदसि ॥
लोभ विजर लोभी मरजिया
पदारथ चारि खंद खंदसि ।
कहें श्रीहरिदास तेई जीव पार भये
जे गहि रहे चरन आनन्द नंदसि ॥९॥

हरि के नाम को आलस कत करत है

रे काल फिरत सर सांधें।

बेर कुबेर कछ नाह जानत,

चढ्यो फिरत है काँधें ।

हीरा बहुत जवाहर संचे,

कहा भयो हस्ती दर बांधे ॥

कहें श्रीहरिदास महल में बनिता बनि ठाढ़ी भई

एको न चलत जब आवत अंत को आधि

॥१०॥

देखो इन लोगनि की लावनि।
बूझत नाहि हरि- चरन-कमल को
मिथ्या जनम गेंवावनि ॥
जब जमदूत आइ घेरत हैं
तब करत आप मन भावनि।
कहें श्रीहरिदास तबीहि चिरजीवो
जब कुंजबिहारी चितावति ॥ ११॥

॥ राग विलावल ॥

सन लगाय प्रीति कीज कर करवा सों,
ब्रज बीथिनि दीजै सोहनी ।
वृन्दावन सों वन उपवन सों
गुंज-माल हाथ पोहनी ॥
गो गो-सुतन सों मृगी सृग” सुतन सों
और तन नेकु न जोहनी ।
श्रीहरिदास के स्वामी स्यामा कुंजबिहारी सों
चित्त ज्यों सिर पर दोहनी ॥१२॥

हरि को ऐसोई सब खेल ।
मुग- तृष्णा जग व्यापि रहो है
कहूँ बिजोरो न बेल ॥
धन-मद जोबन-मद रू राज-मद
ज्यों पंछिन सैं डेल ।
कहें श्रीहरिदास यहै छँ जिय जानों
तीरथ कसो मेल ॥१३॥

झूठी बात साँची करि दिखावत हो
हरि नागर ।

निसि-दिन बुनत उधेरत जात
प्रपंच को सागर ॥

ठार बनाय धरो मिहरी को
है पुरुष तें आगर ।

सुनि श्रीहरिदास यहै जिय जानों
सपने को सो जागर ॥१४॥

॥ राग कल्याण ॥

जगत प्रीति करि देखी
नाहिनें गटी को कोऊ।
छत्रपति रंक लों देखे
प्रकृति विरोध बन्यो नाहि कोऊ ॥ दिन जो
गये बहुत जनमनि के
ऐसें जाउ जिनि कोऊ ।
कहें श्रीहरिदास मीत भले पाये बिहारी
ऐसो पावो सब कोऊ ॥ १५॥

लोग तो भूलें भलें भूलें,
तुम जिन भूलो माला- धारी ।
अपनों पति छाँडि औरनि सों रति
ज्यों दारनि में दारी ॥

स्याम कहत तेई जीव मोते बिमुख भये
सोऊ कोन जिन दूसरी करि डारी ।
कहें श्रीहरिदास जग्य देवता पितरन
कों श्रद्धा भारी ॥१६॥

जौलों जीवे तौलों हरि भजि रे मन
ओर बात सब बादि।
द्योस चारि के हला-भला में
तु कहा लेइगो लादि ॥
माया-मद गुन-मद जोवन-मद
भुल्यो नगर विवादि ।
कहें श्रीहरिदास लोभ चरपट भयो
काहे की लगे फिरादि ॥१७॥

प्रेमसमुद्र रूप रस गहरे,
कैसें लागें घाट।
बेकार्यों दे जान कहावत
जातिपन्यो को कहाँ परी बात ॥
काहू को सर सुधो न परे
मारत गाल गली गल हाट।
हैं श्रीहरिदास जानि ठाकुर बिहारी
तकत ओटपाट ॥१८॥

॥ इति श्रीअष्टादश-सिद्धान्त के पद सम्पूर्ण ॥